लौह मानव - राना ज़ैदी वैशाली गाज़ि

महत्वकांक्षाओं के पंख लगाकर
अनंत असीम अम्बर को छूने हम उड़े जा रहे उड़े जा रहे
उदंड अभिलाषा कहती है चन्द्र पटल पर पाँव रख
और इसे भी मैला कर
अभिमानी मन कहता है -
उदयमान दिनकर की लाली पोंछ के अपना राजतिलक कर
पर -- अन्तरात्मा कहती है
लौह युग के हे लौह मानव --!
निःसंदेह ही बदल लिया तूने - अपना सम्पूर्ण स्वरूप
पर कहां गई वह दुर्लभ काया जो मिली तुझे वरदान स्वरूप
इस विकृत आकृति का तुमको ऐसा क्यों अभिशाप मिला
खोज रहे थे सर्वत्र सौन्दर्य पर - ऐसा क्यों संताप मिला
श्रीहीन क्यों मुखमंडल है
नैना तेरे क्यों निर्जल हैं
कहां गये वो कल निनाद
कहां गये वो हर्षोल्लास
जर्जर हो गई संस्कृति तुम्हारी
क्यों रुग्ण हो गये सर्वसंस्कार
कहां गई वो मनोरमाएं, लोक-लाज थे जिनके श्रृंगार
क्यों अरुण बिन्दु से सजी ललाट
क्यों मुख पर चिन्तन रेखा फैली
कहां गया वो मन का कलरव
कहां खो गया हर्षोन्माद
गर्द, धूल, धुआँ प्रदूषण
क्यों भरता है इसमें पल-पल ?
कहां गया वह स्वर्ग सा गाँव
कहां खो गई नदिया कल-कल
क्यों ईद की चाशनी लगे निःस्वाद
क्यों दीवाली है धुँधली-धुंधली
कहां गुम हुई मित्र मंडली
कहां खो गये उन्मुक्त अट्टहास
लौह युग के हे लौह मानव
ज़रा ध्यान कर मर न जाये
रक्त रंजित तेरी व्यथित अन्तरात्मा और --
टूट न जाये तेरा घमण्ड
डरती हूँ तू बन न जाये
लौह मानव से मात्र-लौह खण्ड ---||

Ph: 9718760701